International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 8 Issue 7, July- 2018
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |**Thomson Reuters Researcher ID: L-5236-2015**

साम्यवादी विचारधारा की भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में भूमिका

सुमन गोयल

सहायक आचार्य ;इतिहास

रामेश्वरी देवी कन्या महाविद्यालय भरतपुर ;राजस्थान

साम्यवाद का प्रारम्भ एक छोटे से अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक संगठन की प्रार्थना पर सन् 1847–48 में लिखित 'कम्यूनिस्ट मैनिफेस्टो' के प्रकाषन के साथ हुआ। 'कम्यूनिस्ट मैनिफेस्टो' में श्रमिक वर्ग की भूमिका की व्याख्या की गई और श्रमिकों को अपनी मुक्ति प्राप्त करने के ध्येय से एकता बद्ध होने का सन्देष दिया गया।[1]

विष्व में मजदूरों एवं किसानों की स्वतंत्रता का सन्देष लाने वाली यह विचारधारा शीघ्र ही लोकप्रिय हो गयी। लेनिन के रूप में इस विचारधारा को एक दृढ़ निष्चयी नायक भी मिल गया। 7 नवम्बर 1917 को लेनिन के नेतृत्व में बोल्षेविक पार्टी ने जार के राजषाही शासन को उखाड़ फैंका और पहले समाजवादी राज्य की स्थापना की घोषणा की। इस तरह शासन के मार्क्सवादी मॉडल को लेनिन ने ग्रन्थों से रूस की धरती पर उतार दिया।[2]

बोल्षेविक क्रान्ति एवं सोवियत संघ में साम्यवादी विचारधारा पर आधारित सरकार की स्थापना ने भारतीय जनता को उत्साह से भर दिया। अब भारतीय यह सोचने लगे कि यदि आम जनता, मजदूर, किसान एवं बुद्धिजीवी वर्ग संगठित होकर जार के शक्तिषाली शासन का तख्ता पलट सकते हैं, और ऐसी सामाजिक व्यवस्था कायम कर सकते हैं, जिसमें एक आदमी के द्वारा दूसरे आदमी का शोषण नहीं किया जाता तब ब्रिटिष साम्राज्यवाद से लड़ने वाली भारतीय जनता भी ऐसा कर सकती है।[3]

समाजवादी विचार अब भारत की धरती पर तेजी से पैर पसार रहे थे। असहयोग आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लेने वाले बहुत सारे नौजवान इसके नतीजों से खुष नहीं थे और गाँधीवादी नीतियों, विचारों आर यहाँ तक कि वैकल्पिक स्वराज्यवादी कार्यक्रमों से भी सन्तुष्ट नहीं थे। इसलिए मार्गदर्षन के लिए उन लोगों ने अपना रुख समाजवादी विचारों की ओर मोड़ा। इस समय सम्पूर्ण देष में समाजवादियों और कम्यूनिस्टों के कुछ दल अस्तित्व में आए।

बम्बई मे श्री पाद अमृत डांगे ने 'गाँधी और लेनिन' नाम का एक पर्चा प्रकाषित किया तथा पहले समाजवादी साप्ताहिक की शुरूआत की जिसका नाम 'द सोषलिस्ट' था। मुजफ्फर अहमद ने बंगाल में 'नव युग' पत्र निकाला और बाद में कवि काजी नजरूल इस्लाम के सहयोग से 'बंगाल' नामक पत्र का प्रकाषन शुरु कर दिया। पंजाब में गुलाम हुसैन ने कुछ अन्य लोगों के साथ मिलकर 'इंकलाब' का प्रकाषन किया। मद्रास में एम0 सिंगारवेलू ने 'लेबर किसान गजट' की स्थापना की।[7]

सारे देष में सन् 1927 के बाद कई युवक संगठन स्थापित किए गए। शहीद भगत सिंह द्वारा स्थापित 'नौजवान भारत सभा' तथा 'इडियन रिपब्लिकन एसोसिएषन' एवं 'रिपब्लिकन आर्मी' उत्तर भारत के प्रमुख सामजवादी संगठन थे, जो अक्टूबर क्रान्ति के विचारों से प्रभावित थे।[8] देष की राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक बुराइयों से छुटकारा पाने के लिए इन लोगों ने क्रान्तिकारी हल की वकालत की।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 8 Issue 7, July- 2018
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |**Thomson Reuters Researcher ID: L-5236-2015**

भारत मे साम्यवादी आन्दोलन का विकास

भारत में समाजवादी विचार प्राचीन काल से ही फल–फूल रहे थे। सन् 1917 की बोल्षेविक क्रान्ति, एम.एन. राय एवं अन्य अप्रवासी भारतीयों के प्रयासों एवं आन्तरिक परिस्थितियों के फलस्वरूप साम्यवादी विचार भी भारत में प्रवेष कर गए। सन् 1920 म सोवियत उज्बेकिस्तान की राजधानी ताषकंद में राय के द्वारा 'कम्यूनिस्ट पार्टी ऑफ इण्डिया' की स्थापना के बाद भारतभूमि पर साम्यवादी विचारों दलों एवं गुटों के विकास के सम्पूर्ण इतिहास को निम्नानुसार पाँच चरणों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

भारत में साम्यवादी आन्दोलन के विकास के विभिन्न चरण

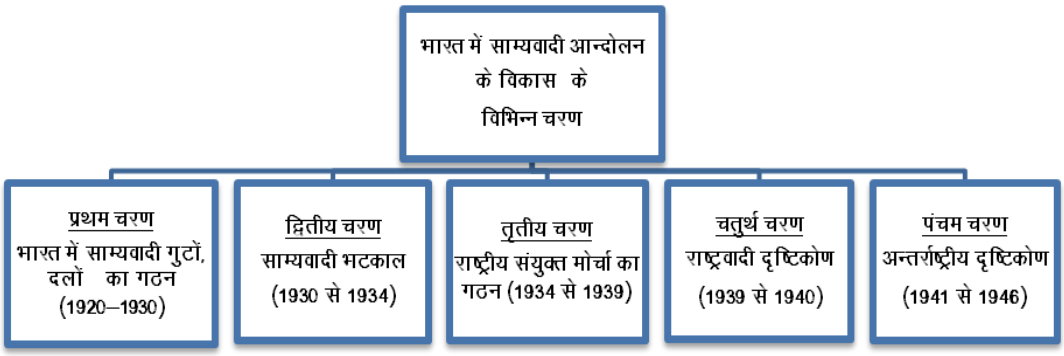

भारत में साम्यवादी आन्दोलन :–

प्रथम चरण – भारत में साम्यवादी आन्दोलन के विकास के इस प्रथम चरण की मुख्य प्रवृत्तियों को निम्नानुसार वर्गीकृत किया जा सकता है।

भारत में साम्यवादी आन्दोलन के प्रथम चरण की मुख्य प्रवृतियाँ

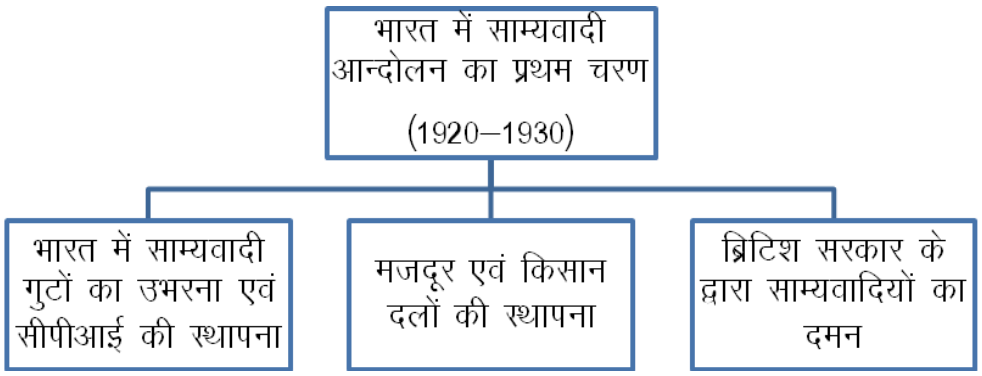

ताषकंद में 'भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी' की स्थापना के बाद से ही एम.एन. राय भारत में उभर रहे कम्यूनिस्ट समूहों से सम्पर्क करने के प्रयास में लग गए। 1922 तक नलिनी गुप्ता और शौकत उस्मानी के माध्यम से राय कम्यूनिस्ट समूहों से गुप्त

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 8 Issue 7, July- 2018
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |**Thomson Reuters Researcher ID: L-5236-2015**

सम्पर्क स्थापित करने में सफल हो चुके थे। ये समूह असहयोग एवं खिलाफत आन्दोलन के अनुभव के बाद बम्बई में एस.ए. डांगे, कलकत्ता में मुजफ्फर अहमद, मद्रास में सिंगारवेलू, संयुक्त प्रान्त में शौकत अली उस्मानी एवं लाहौर में गुलाम हुसैन के नेतृत्व में उभर रहे थे।

दिसम्बर 1925 में कानपुर में भारतीय कम्यूनिस्ट समूहों का एक खुला अधिवेषन आयोजित किया गया। भारत में नए–नए उदित हुए ये समूह, जो 'कॉमिंटर्न' से अपनी स्वाधीनता पर बल दे रहे थे, कानपुर सम्मेलन में आपस में मिले और इन लोगों ने एक अखिल भारतीय स्तर का साम्यवादी संगठन कायम किया। इसी संगठन का नाम 'कम्यूनिस्ट पार्टी ऑफ इण्डिया' रखा गया।[17]

'भारत की कम्यूनिस्ट पार्टी' का उद्देष्य भारत को ब्रिटिष साम्राज्य से मुक्त करना था। वस्तुतः भारत में कम्यूनिस्ट पार्टी की स्थापना में क्रान्तिकारी युवाओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा। कम्यूनिस्टों एवं भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और मुस्लिम लीग के उद्देष्यों में भी अन्तर था। कम्यूनिस्ट भारत को ब्रिटिष साम्राज्य से मुक्त करना चाहते थे जबकि कांग्रेस एवं मुस्लिम लीग ब्रिटिष साम्राज्य के अन्तर्गत ही औपनिवेषिक स्वराज्य की मांग कर रहीं थीं। इस प्रकार भारत में उपजने वाली क्रांतिकारी विचारधारा को अब राजनीतिक अभिव्यक्ति मिलने लगी थी।

भारत में मजदूर एवं किसान दलों की स्थापना :–

शुरुआती दौर के कम्यूनिस्टों के राजनीतिक कार्य का मुख्य उद्देष्य मजदूरों एवं किसानों के दलों को संगठित करके उनके माध्यम से काम करना होता था। इस प्रकार का पहला संगठन 'लेबर स्वराज पार्टी' था। नवंबर 1925 में बंगाल में 'लेबर स्वराज पार्टी' की स्थापना मुजफ्फर अहमद, नजरुल इस्लाम कुतुबुद्दीन अहमद, हेमन्त सरकार और कुछ दूसरे लोगों ने मिलकर की थी। पंजाब में 1926 में कीर्ति पत्रिका के इर्द–गिर्द भी ऐसा ही समूह गठित हुआ। बम्बई में भी जनवरी 1927 में एक 'मजदूर किसान पार्टी' की स्थापना की गई। इस पार्टी का नाम 'कांग्रेस लेबर पार्टी' रखा गया। 1928 तक आकर इन सभी प्रान्तीय संगठनों को मिलाकर एक नया संगठन बनाया गया जिसका नाम 'वर्कर्स एण्ड पीजेन्टस पार्टी' रखा गया। 'वर्कर्स एण्ड पीजेन्टस पार्टी' को अखिल भारतीय संगठन का रूप दिया गया जिसकी इकाईयाँ दिल्ली, राजस्थान और उत्तर प्रदेष में भी स्थापित की गईं। सभी कम्यूनिस्ट इस पार्टी के सदस्य हुआ करते थे।[19]

ब्रिटिष बुर्जुआ सरकार के द्वारा भारतीय साम्यवादियों का दमन :–

1917 की बोल्षेविक क्रान्ति ने समस्त संसार के शासक वर्ग में भय की लहर व्याप्त कर दी थी। भारत में थोड़े से कम्यूनिस्ट समूहों के उदय से ब्रिटिष सरकार में हड़कंप मच गया था। 1920 के दषक में होम पॉलिटिकल फाइलों में बोल्षेविक खतरे का आतंक छाया रहता था। ब्रिटिष शासक भारत में एक शक्तिषाली कम्यूनिस्ट पार्टा बनने से पूर्व ही कम्यूनिस्ट आन्दोलन की शक्ति तोड़ देना चाहते थे। अतः 1921 से 1930 तक उन्होंने सात मुकदमे चलाए और जितने भी प्रमुख कम्यूनिस्ट नजर आए उन्हें कड़ी सजाएं दीं। सात मुकदमों में से पाँच मुकदमे पेषावर में चले, एक कानपुर और एक मेरठ में चला।

पषावर षडयंत्र :–

एम.एन. राय ने अक्टू. 1920 में ताषंकद में भारतीय सीमान्त जन जातियों को प्रषिक्षित करने के लिए एक सैनिक स्कूल की स्थापना की थी। ताषकंद की राय द्वारा स्थापित 'कम्यूनिस्ट पार्टी' से सम्बद्ध एवं 'राजनीतिक सैनिक स्कूल' से प्रषिक्षित लोगों ने जब अफगानिस्तान के रास्ते से भारत में प्रवेष करने की कोषिष की तब उन्हें ब्रिटिष सरकार के द्वारा गिरफ्तार कर लिया गया। सन् 1922–24 के बीच भारत में पुनः प्रवेष का प्रयास करने वाले इन मुहाजिरों को राजद्रोह के अनेक मामलों में फँसाकर 'पेषावर षडयंत्र' के पाँच अभियोगों की श्रृंखला के तहत लंबी सजाऐं दी गईं।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 8 Issue 7, July- 2018
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |**Thomson Reuters Researcher ID: L-5236-2015**

कानपुर षडयंत्र :–

17 मार्च 1924 को एम.एन. राय, एस.ए.डांगे, मुजफ्फर अहमद, नलिनी गुप्ता, शौकत उस्मानी, सिंगारवेलू चेट्टियार, गुलाम हुसैन और आर.सी. शर्मा को कानपुर षडयंत्र के मुकदमे में फँसाकर सरकार ने कम्यूनिस्ट आन्दोलन को कुचलने की कोषिष की।[21] सरकार का आरोप था कि इन कम्यूनिस्टों ने 'कम्यूनिस्ट इंटरनेषनल' नामक क्रान्तिकारी कम्यूनिस्ट संगठन की एक शाखा भारत में स्थापित की है और इस संगठन का उद्देष्य ब्रिटिष सम्राट की भारत पर प्रभुता को एक सषस्त्र क्रान्ति द्वारा समाप्त करना है। अभियुक्तों पर मुकदमा कानपुर में चलाया गया था इसलिए यह मामला कानपुर षडयंत्र केस के नाम से प्रसिद्ध हो गया। मुकदमे के दौरान डांगे ने भारत में समाजवाद के प्रचार–प्रसार का दावा किया क्योंकि ब्रिटिष साम्राज्य के अन्य हिस्सों तथा ब्रिटेन में ऐसी स्वतंत्रता उपलब्ध है। लकिन सरकार का उद्देष्य भारत में कम्यूनिस्टों को ऐसी स्वतंत्रता देना नहीं वरन् उनका दमन करना था। अन्ततः डांगे, अहमद, गुप्ता एवं उस्मानी को चार–चार वर्ष के कठोर कारावास की सजा दी गई।[22]

मेरठ षडयंत्र :–

1924 तक राष्ट्रीय और ट्रेड यूनियन आंदोलन में कम्यूनिस्टों के बढ़ते प्रभाव के कारण सरकार गंभीर रूप से चिन्तित थी। इसने इन पर एक भयानक प्रहार किया। 20 मार्च 1929 में अचानक एक ही झपट्टे में सरकार ने 32 लोगों को गिरफ्तार कर लिया जिसमें क्रान्तिकारी, राजनीति कर्मी तथा ट्रेडयूनियन के लोगों के साथ तीन ब्रिटिष कम्यूनिस्ट भी थे। ये तीन लोग थे : फिलिप स्प्रेट, बेन ब्रेडले और लेस्टर हचिन्सन।[23] ये लोग भारत में ट्रेड यूनियन आंदोलन को संगठित करने में मदद करने आए थे। सरकार का मूल उद्देष्य ट्रेड यूनियन आंदोलन को समाप्त करना और कम्यूनिस्टों को राष्ट्रीय आंदोलन से अलग–थलग करना था। 32 अभियुक्तों पर मेरठ में मुकदमा चलाया गया। मेरठ राजद्रोह कांड तत्काल राष्ट्रीय महत्व धारण कर गया।

भारत में साम्यवादी आन्दोलन :–

द्वितीय चरण :– सन् 1930 तक इस बात के पर्याप्त संकेत मिलने लगे कि श्रमिक आन्दोलनों में आई तीव्रता अब ढलने लगी थी तथा कम्यूनिस्ट अब कमजोर पड़ गए थे। साम्यवादी आन्दोलन में आई इस कमजोरी का महत्वपूर्ण कारण सरकारी दमन के साथ–साथ स्वयं कम्यूनिस्टों की नीति में आया बदलाव भी था।

दिसम्बर 1928 की छठवीं 'कम्यूनिस्ट इंटरनेषनल' से निर्देषित होकर कम्यूनिस्टों ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस से नाता तोड़ लिया और इसे पूँजीपति वर्ग की पार्टी घोषित कर दिया। कम्यूनिस्ट स्टालिन की इस विचित्र नीति का अनुसरण करने लगे कि ''मध्यमार्गी शक्तियों पर ही अपना आक्रमण केन्द्रित करो।[25] इसलिए अब भारतीय कम्यूनिस्ट नेहरु एवं सुभाष जैसे अपेक्षाकृत वामपंथी रुझाान वाले कांग्रेसियों को ही अपनी आलोचना का षिकार बनाने लगे। 1930 में पं. जवाहर लाल लेहरु को साम्राज्यवाद विरोधी लीग से भी निकाल दिया गया।लेकिन इस तरह की विचारधारा साम्यवादियों के लिए घातक सिद्ध हुई। कम्यूनिस्टों पर सरकारी प्रहार और उनकी कांग्रेस विरोधी नीति का परिणाम यह हुआ कि वे राष्ट्रीय आन्दोलन में अलग–थलग पड़ गया।

भारत में साम्यवादी आन्दोलन :–

तीसरा चरण :– भारत में साम्यवादी आन्दोलन के विकास का तीसरा चरण जो सन् 1934 से सन् 1939 तक चला की मुख्य घटनाओं को निम्नानुसार वर्गीकृत किया जा सकता है–

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 8 Issue 7, July- 2018
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |**Thomson Reuters Researcher ID: L-5236-2015**

भारत में साम्यवादी आन्दोलन के तृतीय चरण की मुख्य प्रवृतियाँ

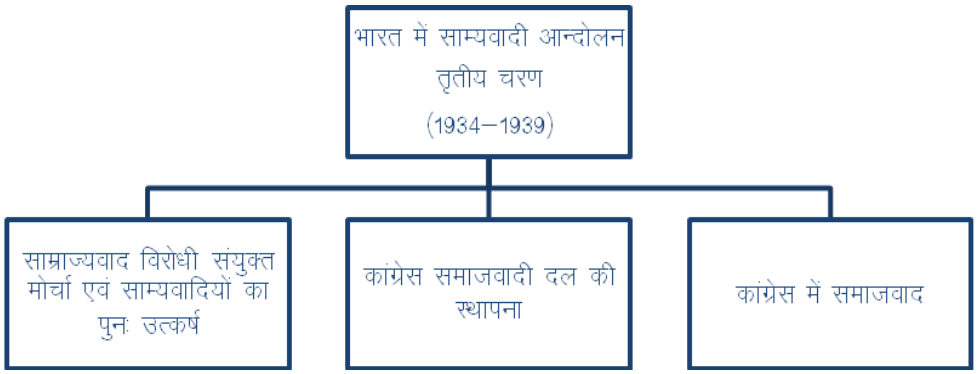

साम्राज्यवाद विरोधी संयुक्त मोर्चा एवं साम्यवादियों का पुनः उत्कर्ष :–

बहरहाल कम्यूनिस्ट आन्दोलन महाविनाष से बच गया। एक ओर बहुत से कम्यूनिस्टों ने सविनय अवज्ञा आन्दोलन से अपने आप को अलग रखना नामंजूर कर दिया, तथा सक्रिय रूप से इसमें भाग लिया तो दूसरी ओर भारत में इन्होंने साम्यवादी विचारों का प्रचार जारी रखा। सन् 1935 में पी.सी. जोषी के नेतृत्व में कम्यूनिस्ट पार्टी का पुनर्गठन हुआ। सन् 1934 में साम्यवादी कम्यूनिस्ट पार्टी के मुख्य केन्द्र बम्बई, कलकत्ता एवं पंजाब थे। अब पार्टी ने मद्रास तक प्रभाव विस्तार के लिए प्रयास करने शुरु कर दिए। आन्ध्र एवं तमिल छात्रों का एक समूह जिनमें पी. सुन्दरैया भी थे, साम्यवादी आन्दोलन में अमीर हैदर खान के द्वारा भर्ती किया गया।[26]

भारतीय साम्यवादियों की नीति में बुनियादी परिवर्तन तब आया जब अगस्त 1935 में मास्को में कम्यूनिस्ट इंटरनेषनल की सातवीं कान्फ्रेंस में उन्हें यह सुझाव दिया गया कि वे 'भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस' के संगठन का प्रयोग करें तथा कांग्रेस समाजवादी दल को सुदृढ़ बनाऐं, और प्रतिक्रियावादी दक्षिणपंथी लोगों को कांग्रेस से निकाल बाहर करें।

कांग्रेस समाजवादी दल की स्थापना :–

सन् 1932–33 के मध्य नासिक केन्द्रीय कारावास में कुछ कांग्रेसी नेताओं, जिनमें जयप्रकाष नारायण, अच्युत पटवर्द्धन, एम. आर. मसानी, एन.जी. गोरे, अषोक मेहता, एस.एम. जोषी, एम.एल. दंतवाला प्रमुख थे, ने कांग्रेस के एक अंग के रूप में अखिल भारतीय समाजवादी दल की स्थापना पर विचार विमर्ष किया। मई 1934 में पटना में कांग्रेस महासमिति की बैठक से पूर्व समाजवादी विचारधारा के समर्थक इन नेताओं की एक अलग बैठक हुई जिसमें 'कांग्रेस समाजवादी दल' की औपचारिक रुप से स्थापना की गई तथा अक्टूबर 1934 में बम्बई में कांग्रेस के वार्षिक अधिवेषन के दौरान इसकी नीतियाँ व कार्य प्रणाली निर्धारित की गई। इस विचारधारा से आचार्य नरेन्द्र देव, डॉ. राम मनोहर लोहिया, पुरुषोत्तम विक्रमदास, यूसुफ मेहरअली, गंगाषरण सिंह एवं कमला देवी चट्टोपाध्याय आदि भो जुड गये।

सन् 1936 में रजनी पाम दत्त एवं ब्रैड ले ने एक पुस्तक 'द एंटी इम्पीरियलिस्ट पीपुल्स फ्रंट' का प्रकाषन किया। इस पुस्तक के अन्तर्गत इन दोनों ने जिस विचारधारा का प्रतिपादन किया उसे 'दत्त–ब्रैड ले थीसिस' कहा जाता है।' उनका कहना था कि कांग्रेस भारत का एक ऐसा राजनीतिक दल है जो राष्ट्रवादी संघर्ष कर रहा है। अतः कम्यूनिस्टों के लिए अब यह आवष्यक है कि वे कांग्रेस के भीतर जाकर 'कांग्रेस समाजवादी दल' को मजबूत करें एवं कांग्रेस से दक्षिण पंथी लोगों को

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 8 Issue 7, July- 2018
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |**Thomson Reuters Researcher ID: L-5236-2015**

निकाल बाहर करें। इस प्रकार दत्त–ब्रैडले थीसिस का उद्देष्य कांग्रेस जैस विषाल संगठन पर अधिकार करना था ताकि अपनी विचारधारा को सम्पूर्ण भारत में प्रसारित किया जा सके।

कांग्रेस में समाजवाद :–

इसी समय 'कांग्रेस' में भी समाजवादी विचारों को जमीन मिलती जा रही थी। सन् 1936 में नेहरु कांग्रेस के अध्यक्ष बने। लखनऊ एवं फैजपुर अधिवेषनों में उनके भाषण इन वर्षों में राष्ट्रीय आंदोलन पर वामपंथ के प्रभाव की पराकाष्ठा का संकेत देते प्रतीत होते थे।

श्रमिक एवं किसान संगठन तथा रियासतों में चलने वाले प्रजामण्डल आन्दोलन आदि मुद्दों पर कांग्रेस के भीतर भी एक शक्तिषाली वामपक्ष उभर रहा था। यह वामपक्ष कांग्रेसी मंत्रिमंडलों, कांग्रेस हाई कमान एवं अधिकांष सदस्यों के रुढ़िवादी रवैये के लिए चुनौती के रूप में उभरा। इस काल में वामपंथ के अन्दर 'कांग्रेस समाजवादी दल' के सदस्य, एम.एन. राय के अनुयायी एवं गैर कानूनी सी.पी.आई. जो 'कांग्रेस समाजवादी दल' की आड़ में कार्य करती थी के सदस्य शामिल थे। कांग्रेस में शामिल इन सभी साम्यवादियों को दो कांग्रेसाध्यक्षों सुभाष चन्द्र बोस एवं नेहरु का समर्थन प्राप्त था। यह समर्थन अनिष्चित एवं बड़ी सीमा तक मौखिक होने के बावजूद मूल्यवान था।

भारत में साम्यवादी आन्दालन :–

चतुर्थ चरण :– सन् 1939 में सम्पूर्ण विष्व एक और युद्ध की विभीषिका में जलने को तैयार हो गया। अन्तर्राष्ट्रीय परिवेष में स्थापित शक्ति सन्तुलन में बड़े परिवर्तनों की तैयारी होने लगी। इन परिस्थितियों से भारतीय साम्यवादी आन्दोलन भी अछूता नहीं रहा। सावियत संघ की मित्र राष्ट्रों एवं धुरी राष्ट्रों के प्रति नीति ने भारतीय साम्यवादी आन्दोलन की दिषा एवं दषा तय की। द्वितीय विष्वयुद्ध की परिस्थितियों में भारत में साम्यवादी आन्दोलन दो अलग–अलग चरणों से गुजरा।

1. राष्ट्रवादी दृष्टिकोण
2. अन्तर्राष्ट्रीयतावादी दृष्टिकोण

1 सितम्बर 1939 को नाजी जर्मनी ने पोलैण्ड पर हमला कर दिया। इसके पूर्व मार्च 1938 में वह आस्ट्रिया और चेकोस्लोवाकिया पर कब्जा कर चुका था। ब्रिटेन और फ्रान्स जो अभी तक हिटलर के प्रति तुष्टिवादी नीति अपनाए हुए थे, अब पोलैण्ड की मदद करने के लिए आगे आए और जर्मनी के विरुद्ध युद्ध छेड़ देने के लिए बाध्य हो गए। 3 सितम्बर 1939 को उन्होंने जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी।

इसी दिन भारत में वायसरॉय लिनलिथगो ने प्रान्तीय मंत्रिमण्डलों या किसी भी भारतीय नेता से परामर्ष किए बिना एकतरफा तौर पर भारत को जर्मनी क विरुद्ध युद्धरत घोषित कर दिया। युद्ध के प्रति कांग्रेस का दृष्टिकोण क्या हो यह निष्चित करने के लिए 10 से 14 सितम्बर तक कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक वर्धा में हुई, जिसमें सुभाष चन्द्र बोस, आचार्य नरेन्द्र देव और जय प्रकाष नारायण को भी आमंत्रित किया गया।

वर्धा समिति की बैठक में गम्भीर मतभेद उभर कर सामने गए। गाँधीजी मित्र राष्ट्रों के प्रति सहानुभूति के पक्ष में थे। उनका कहना था कि पष्चिम यूरोप के लोकतान्त्रिक राज्यों और हिटलर का नेतृत्व स्वीकार करने वाले निरंकुषतावादी राज्यों में साफ फर्क है। समाजवादियों एवं सुभाष चन्द्र बोस का तर्क था कि चूँकि यह साम्राज्यवादी युद्ध है और दोनों ही पक्ष अपने–अपने निहित स्वार्थों की रक्षा के लिए लड़ रहे हैं, अतः किसी भी एक पक्ष का समर्थन नहीं किया जा सकता। कांग्रेस का कर्त्तव्य यह है कि वह स्थिति का फायदा उठाए और तुरंत सविनय अवज्ञा आंदोलन छेड़ दे। इन दोनों ही से अलग मत

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 8 Issue 7, July- 2018
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |**Thomson Reuters Researcher ID: L-5236-2015**

जवाहर लाल नेहरु द्वारा व्यक्त किया गया। उनका मत था कि भारत को स्वाधीन होने से पहले न तो युद्ध में शामिल होना चाहिए और न ही ब्रिटेन की कठिनाइयों का लाभ उठाकर सविनय अवज्ञा आंदोलन छेड़ना चाहिए।

युद्ध के प्रति दृष्टिकोण एवं कार्यषैली को लेकर जिस समय कांग्रेस गहरे असमंजस में थी उसी समय भारतीय साम्यवादियों के लिए युद्ध के प्रति नीति अपनाना आसान रहा। अगस्त 1939 में नाजी जर्मनी एवं सोवियत संघ के मध्य संधि के पष्चात् कोमिंटर्न की नीति में एकदम बदलाव आया जिसने यूरोप में कम्यूनिस्टों को बड़ी उलझन में डाल दिया था परंतु भारत में उनके कॉमरेडो के लिए यही बातें वरदान सिद्ध हुई थीं।[28] अब वे एक साथ सोवियत नीतियों को अंतर्राष्ट्रीय समर्थन भी दे सकते थे और ब्रिटेन के प्रति राष्ट्रीय वैमनस्य भी प्रकट कर सकते थे।

इस समय सुभाष चन्द्र बोस और उनके 'फॉरवर्ड ब्लॉक', 'कांग्रेस सोषलिस्ट पार्टी', 'कम्यूनिस्ट पार्टी', एवं अन्य वामपंथी समूहों ने एक वैकल्पिक रणनीति प्रस्तुत की। उनका कहना था कि यह युद्ध साम्राज्यवादी युद्ध है और यही वह मौका है, जब ब्रिटिष साम्राज्यवाद के खिलाफ चौतरफा युद्ध छेड़कर आजादी हासिल की जा सकती है।

एम.एन. रॉय के गुट को छोड़कर जो युद्ध को फासीवाद–विरोधी मानता था और इस कारण उसे बिना शर्त समर्थन दे रहा था, सम्पूर्ण वामपंथ 1941 के अंत तक युद्ध–विरोधी संघर्ष के लिए प्रयास करता रहा। सुभाष चन्द्र बोस एवं कम्यूनिस्ट चाहते थे कि भारत अंग्रेजों की मुसीबत से लाभ उठाए इसलिए बोस ने रामगढ़ कांग्रेस के समानान्तर एक 'समझौता विरोधी कांग्रेस' की अध्यक्षता भी की। अगस्त प्रस्तावों के खोखलेपन एवं अपर्याप्तता और वायसराय की समझौते के प्रति बेरुखी के बावजूद कांग्रेस एवं गाँधीजी के द्वारा ठोस कदम न उठाने के लिए बोस ने उनकी कड़ी आलोचना की। यद्यपि समाजवादियों और कम्यूनिस्टों के सम्बन्ध पहले ही बिगड़ चुके थे, क्योंकि सी.पी. आई ने सी.एस.पी. के सर्वोत्तम नेताओं एवं इकाईयों को हथिया लिया था, फिर भी जहाँ तक युद्ध संबंधी दृष्टिकोण का प्रष्न था, सन् 1941 के अंत तक दोनों में कोई बड़ा राजनीतिक मतभेद नहीं था। इस समय तक कम्यूनिस्ट 'संयुक्त राष्ट्रीय मोर्चे' में दरार पैदा करने की बजाए संघर्ष शुरु करने के लिए कांग्रेस नेतृत्व पर दवाब डालने को ही महत्व दे रहे थे। नजरबंद सुभाष चन्द्र बोस जनवरी 1941 में भारत से निकल भागे और अफगानिस्तान से रूस होते हुए जर्मनी पहुंचने में उन्होंने गुप्त कम्यूनिस्ट तंत्र की सहायता ली। वे अपनी देषभक्ति के अंतिम और सर्वाधिक नाटकीय चरण में प्रवेष कर चुके थे।

भारत में साम्यवादी आन्दोलन :–

पंचम चरण :– सन् 1941 के उत्तरार्द्ध में होने वाली दो अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं ने भारत की स्थिति को एकदम बदल दिया। रूस पर हिटलर का आक्रमण (22 जून 1941) और दिसम्बर 1941 से दक्षिण पूर्वी एषिया में जापान का नाटकीय अभियान जिसने चार महीनों के भीतर ही अंग्रेजों को मलाया, सिंगापुर और वर्मा से खदेड़ दिया, और जिससे भारत में भी ब्रिटिष साम्राज्य के अचानक खत्म होने का खतरा पैदा हो गया। मार्च 1942 में रंगून पर भी जापानी कब्जा हो गया। युद्ध अब भारत के दरवाजे पर था। ब्रिटेन के प्रधानमंत्री विंस्टन चर्चिल ने सम्राट को बताया कि वर्मा, श्रीलंका, कलकत्ता आर मद्रास भी दुष्मन के कब्जे में जा सकते हैं।

जापान के एषिया अभियान और 'एषिया एषियाइयों के लिए' के नारे ने जहाँ एक ओर भारतीय नेताओं को भारत की सुरक्षा के लिए चिन्तित किया वहीं रूस पर जर्मनी के आक्रमण ने भारतीय कम्यूनिस्टों को बड़ी दुखःद उलझन में डाल दिया। भारत में अंग्रेजों की नीतियाँ पहले के ही समान दमनमूलक एवं प्रतिक्रियावादी बनीं रहीं, मगर ब्रिटेन अब विष्व के एकमात्र साम्यवादी देष का मित्र था जो अपने अस्तित्व के लिए प्राणप्रण से जूझ रहा था। 6 महीने की हिचकिचाहट और आन्तरिक बहस के बाद जनवरी 1942 में सो.पी.आई. विष्व कम्यूनिस्ट आन्दोलन के साथ उठ खड़ी हुई और उसने फासीवाद विरोधी 'जनयुद्ध' को पूर्ण समर्थन देने का आह्वान किया।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 8 Issue 7, July- 2018
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |**Thomson Reuters Researcher ID: L-5236-2015**

'जनयुद्ध' का समर्थन करने के साथ ही सी.पी.आई ने कांग्रेस की स्वतंत्रता के वादे एवं तत्काल एक राष्ट्रीय सरकार के गठन संबंधी मांगों को दोहराया। ये मांगे सी.पी.आई. के लिए भी महत्वपूर्ण तो थीं लेकिन युद्ध का समर्थन करने के लिए अनिवार्य नहीं थी। तथापि भारतीय देषभक्तों में से अधिकांष से चाहे कांग्रेसी दक्षिण पंथी हों, गाँधीवादी हों, समाजवादी हों या बोस के अनुयायी, ऐसे सार्वभोम दृष्टिकोण की आषा नहीं की जा सकती थी। उनमें से अधिकांष तो यह सोच रहे थे कि इस समय ब्रिटेन हार रहा है और भरपूर चोट करके स्वतन्त्र हो जाने का यही सही समय है।

सन् 1942 के ग्रीष्म में गाँधीजी एक विचित्र एवं अनौखी संघर्षषील मनस्थिति में थे। 16 मई को प्रेस साक्षात्कार में उन्होंने कहा ''अंग्रेज भारत को ईष्वर या अराजकता के भरोसे छोड दें। इस सुव्यवस्थित, अनुषासनपूर्ण अराजकता को जाना ही होगा, और यदि इसके परिणाम स्वरूप पूर्ण अव्यवस्था की स्थिति उत्पन्न होती है तो मैं यह खतरा उठाने के लिए तैयार हूँ।''

8 अगस्त 1942 को अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के अधिवेषन में पारित 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव में गाँधीजी ने एक बडे 'जन संघर्ष' के लिए जनता का आह्वान किया और 'करो या मरो' का नारा दिया इसी आह्वान में गाँधीजी ने घोषणा की कि यदि ''आम हड़ताल करना आवष्यक हो तो मैं उससे पीछे नहीं हटूँगा।'' यह गाँधीजी का ऐसा वक्तव्य था जो उनके स्वभाव के अनुकूल नहीं था। यह इसलिए भी महत्वपूर्ण था कि गाँधीजी ने ऐसे समय में आम हड़तालों का समर्थन करने की घोषणा की थी जब कम्यूनिस्टों का इससे अलग रहना तय था। सन् 1941 में सोवियत संघ पर नाजी हमले के बाद साम्यवादियों ने यह तर्क दिया था कि वे फाँसीवादियों को हराने के लिए मित्र राष्ट्रों के युद्ध प्रयासों का समर्थन करें, जिससे साम्यवादियों की पितृभूमि को संकट से उबारा जा सके। यही कारण था कि सी.पी.आई. ने गाँधोजी द्वारा अगस्त 1942 में शुरु किए गए 'भारत छोड़ो आन्दोलन' से स्वयं को अलग कर लिया। अपनी 'जनयुद्ध' की अवधारणा एवं भारत छोड़ो आन्दोलन का विरोध आदि मुद्दों के कारण 'कम्यूनिस्ट' एवं 'गैर–कम्यूनिस्ट' राष्ट्रवादियों के बीच मतभेद बढ़ते चले गए।

विष्व युद्ध के समय अंग्रेजों का समर्थन करने के पुरस्कार के रूप में जुलाई 1942 में सी.पी.आई. से प्रतिबन्ध हटाते हुए इसे पुनः वैध संगठन घोषित कर दिया गया। इस समय जहाँ एक ओर 'भारत छोड़ो आन्दोलन' के कारण अधिसंख्य राष्ट्रवादी जेल में थे, वहीं कम्यूनिस्ट जनता के बीच घूम–घूम कर अपना आधार मजबूत बना रहे थे।[29]

कांग्रेस के साथ सम्बन्ध बिगड़ जाने की दषा में अब कम्यूनिस्टों ने मुस्लिम लीग के साथ निकटता बढ़ानी शुरु कर दी। मुस्लिम लीग के साथ सम्बन्ध प्रगाढ़ बनाने के प्रयासों ने कम्यूनिस्टों को पाकिस्तान की माँग की लगभग स्वीकृति तक पहुँचा दिया। भारत छोड़ो आन्दोलन का विरोध, 'जन युद्ध' की धारणा भारत में 16 राष्ट्रीयताओं के अस्तित्व की स्वीकृति एवं सुभाष चन्द बोस को जयचन्द कहने जैसी कई बातों ने कम्यूनिस्टों को इस समय संदेहास्पद एवं अलोकप्रिय बना दिया।

असंदिग्ध भूलों और पर्याप्त अलोकप्रियता के बावजूद सन् 1942 के पष्चात् का काल भारतीय कम्यूनिस्ट आन्दोलन के इतिहास में नितांत नकारात्मक अनुभव का काल नहीं रहा। जुलाई 1942 में वैधता मिल जाने से कम्यूनिस्टों को स्पष्ट रूप से संगठनात्मक लाभ हुए। क्योंकि सन् 1920 के आरम्भ में कम्यूनिस्टों के पहले गुटों की स्थापना के समय से ही अंग्रेज सरकार उन्हें तंग करती आ रही थी। सन् 1934 में अंग्रेजों ने सीपीआई को अवैध संगठन भी घोषित कर दिया था। सन् 1934 से लेकर 1942 तक कम्यूनिस्ट अपनी गतिविधियों को अन्य संगठनों के आवरण में चला रहे थे। यही कारण है कि जुलाई 1942 वैधता मिल जाने के बाद सीपीआई को स्पष्ट रूप से संगठनात्मक लाभ हुआ। पार्टी की सदस्य संख्या जो सन् 1942 में 4000 थी, मई 1943 में 15000 और सन् 1946 के मध्य तक 53000 और फरवरी सन् 1948 में पार्टी के दूसरे अधिवेषन तक 100000 से भी ऊपर हो गई थी।[30]

सन् 1945–46 की शीत ऋतु में कांग्रेसी नेताओं ने दृढ़तापूर्वक जनसंघर्ष की बात को अस्वीकार कर दिया और अपनी समस्त शक्तियां चुनाव लड़ने पर केन्द्रित कर दीं। आम चुनाव क्षेत्रों में कांग्रेस को भारी सफलता मिली। केन्द्रीय असेंबली में उसे 102 में से 57 सीटों पर विजय मिली। प्रांतों में बंगाल, सिन्ध और पंजाब को छोड़कर सर्वत्र इसे बहुमत मिला। इन चुनावों में जहाँ हिन्दू महासभा बुरी तरह पराजित हुई वहीं कम्यूनिस्ट कुछ प्रान्तीय सीटें ही जीत पाए। बंगाल में कम्यूनिस्ट 3 सीटों पर ही विजयी रहे जिनमें श्रमिकों के निर्वाचन क्षेत्र से विजयी ज्योती बसु की एक सीट भी सम्मिलित थी। बम्बई तथा मद्रास में कम्यूनिस्टों को 2–2 सीटों पर विजय मिली। चुनाव परिणामों में यह बात अर्थपूर्ण थी कि अनेक प्रांतों में कम्यूनिस्ट कांग्रेस के मुख्य प्रतिद्वंद्वियों के रूप में उभरकर सामने आए थे। पटेल ने आंध्र कांग्रेस के एक नेता ए. कालेष्वर राव को 27 मार्च 1926 को लिखे पत्र में बधाई देते हुए कहा था ''अत्यंत कडे मुकाबले के बाद कांग्रेस ने कम्यूनिस्टों को सर्वत्र हरा दिया है।'' सन् 1952 के प्रथम महानिर्वाचन के समय कम्यूनिस्ट पार्टी को लोकसभा में 23 सीट प्राप्त हुई। कांग्रेस के बाद लोकसभा में उनका दूसरा स्थान था। इस प्रकार साम्यवादी अब स्वतन्त्र भारत में समाजवादी विचारों के प्रसार के लिए तैयार थे।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. जौहरी जे.सी., जौहरी सीमा, 'आधुनिक राजनीति विज्ञान के सिद्धान्त', स्टर्लिंग पब्लिषर्स प्रा0लि0 न्यू दिल्ली, 2006 पृ. 569।
2. शर्मा कृष्णगोपाल, शर्मा दिग्राजसिंह, कोठारी कमल सिंह 'आधुनिक विष्व का इतिहास', अजमेरा बुक कम्पनी, जयपुर पृ. 333।
3. चन्द्रा विपिन, 'भारत का स्वतंत्रता संघर्ष' हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेषालय, दिल्ली विष्वद्यिालय, दिल्ली 2005 पृ. 233।
4. ग्रोवर बी.एल.,यषपाल 'भारतीय स्वतंत्रता संग्राम तथा सवैधानिक विकास 'एस.चन्द एण्ड कम्पनी लि0 रामनगर, नई दिल्ली 1995 पृ. 295–96।
5. गौतम पी.एल.,'आधुनिक भारत' राज. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर 1998 पृ 658।
6. गौतम पी.एल. वही पृ. 655।

7. चन्द्रा विपिन वही पृ. 234।
8. अग्रवाल अल्का, 'भारतीय वामपंथी राजनीति और हिन्दी उपन्यास' रचना प्रकाषन जयपुर 2001 पृ. 72।
9. सरकार सुमित, 'आधुनिक भारत' रामकमल प्रकाषन जयपुर 2007 पृ. 267।
10. नौटियाल विकास, 'आधुनिक भारत' वासु पब्लिकेषन्स नई दिल्ली 2004 पृ. 737।
11. नागर पुरुषोत्तम, 'आधुनिक भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक चिन्तन', राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर 1994 पृ. 532।
12. सरकार सुमित वही पृ. 267।
13. कोटेश्वर राव एम.बी.एस., 'कम्यूनिस्ट पार्टीज एण्ड यूनाइटेड फ्रंट, एक्सपीरिएन्स इन केरला एण्ड वेस्ट बंगाल', प्रजा शक्ति बुक हाउस, हैदराबाद 2003 पृ. 88।
14. नागर पुरुषोत्तम वही, पृ. 532।
15. सरकार सुमित, वही, पृ. 268।
16. गाँगुली वासुदेव, बनर्जी गोपाल, 'एस.ए. डांगे–अ फ्रूटफुल लाइफ' प्रोग्रेसिव पब्लिषर्स पृ. 63।
17. कोटेष्वर राव एम.बी.एस., वही, पृ. 92–93।
18. नौटियाल विकास, वही, पृ. 802।
19. चन्द्रा विपिन, वही, पृ. 238।
20. सुरजीत हरिकिषन सिंह, 'भारत म कम्यूनिस्ट आन्दोलन का इतिहास – एक रूपरेखा', नेषनल बुक ऐजेन्सी, कलकता 1994 पृ. 25।
21. राहलन ओ. पी. 'एनसाईक्लोपेडिया ऑफ पोलीटिकल पार्टीज', अनमोल पब्लिकेषन 2004 , पृ. 336।
22. गौतम पी.एल., वही, पृ. 705।
23. राहलन ओ. पी., 'रिवोल्यूषनरी मूवमेंट्स' (1936–1946) नई दिल्ली, अनमोल पब्लिषर्स, पृ. 689।
24. नौटियाल विकास, वही, पृ. 805।
25. शाह मुरारी मोहन, 'डाक्यूमेंट्स ऑफ द रिवोल्यूषनरी सोसियलिस्ट पार्टी' अगरतला लोकायत चेतन्य विकास सोसायटी, 2001 पृ. 21।
26. नम्बूदरीपाद ई.एम.एस., 'द कम्यूनिस्ट पार्टी इन केरला सिक्स डिकेड्स ऑफ स्ट्रगल एण्ड एडवान्स', नेषनल बुक सेन्टर, न्यू देहली 1994 पृ. 07।
27. नम्बूदरीपाद ई.एम.एस., वही, पृ. 45।
28. शर्मा हरीषंकर, 'आधुनिक विष्व' मलिक एण्ड कम्पनी जयपुर 2002 पृ. 591।
29. चन्द्रा विपिन, वही, पृ. 295।
30. सुरजीत हरिकिषन सिंह, वही, पृ. 55।

– – – – – – – – – – –